R.N.I. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23

मूल्य-7 रुपये, वर्ष-23, अङ्क-2 फरवरी 2023 1

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ (उ०प्र०) का
मासिक मुख समाचार पत्र

मङ्गलायतन

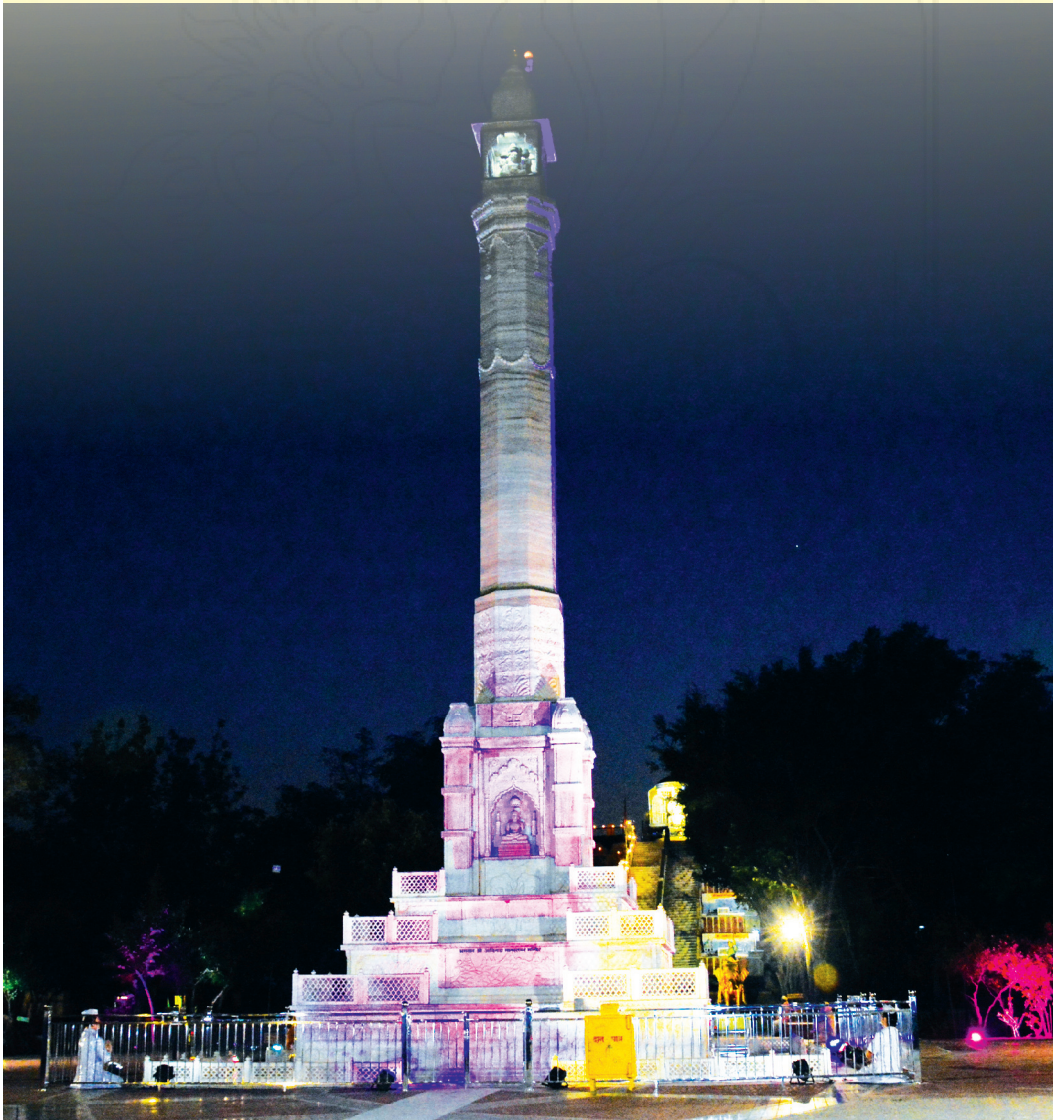

तीर्थधाम मङ्गलायतन के
बीसवें वार्षिकोत्सव की झलकियाँ

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ (उ.प्र.) का

मासिक मुखपत्र

वर्ष-23, अङ्क-2 (वी.नि.सं. 2549; वि.सं. 2079) फरवरी 2023

निर्ग्रन्थ दिगम्बर साधु,....

निर्ग्रन्थ दिगम्बर साधु, अलौकिक जग में।
निर्भय स्वाधीन विचरते, मुक्ति-मग में।।टेक।।

अन्तर्दृष्टि प्रगटाई, निज रूप लख्यो सुखदाई।
बाहर से हुए उदास, सहज अन्तर में।।1।।

जग में कुछ सार न पाया, अन्तर पुरुषार्थ बढ़ाया।
तज सकल परिग्रह भोग, बसे जा वन में।।2।।

निर्दोष अट्ठाईस गुण हैं, देखो निज माहिं मगन हैं।
कुछ ख्याति लाभ पूजादि चाह नहिं मन में।।3।।

जिन तीन चौकड़ीं टूटीं, ममता की बेड़ी छूटी।
अद्‌भुत समता वर्ते जिनकी परिणति में।।4।।

निस्पृह आतम आराधैं, रत्नत्रय पूर्णता साधैं।
निष्कम्प रहें परिषह और उपसर्गन में।।5।।

शुद्धात्म स्वरूप दिखावैं, शिवमार्ग सहज ही बतावें।
गुण चिंतन कर निज शीश धरें चरणन में।।6।।

साभार : मङ्गल भक्ति सुमन

संस्थापक सम्पादक

स्व. पण्डित कैलाशचन्द्र जैन, अलीगढ़

स्व. श्री पवन जैन, अलीगढ़

सम्पादक

डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन

सह सम्पादक

पण्डित सुधीर जैन शास्त्री, मङ्गलायतन

सम्पादक मण्डल

ब्रह्मचारी पण्डित ब्रजलाल शाह, वढ़वाण

बाल ब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़

डॉ. राकेश जैन शास्त्री, नागपुर

श्रीमती बीना जैन, देहरादून

सम्पादकीय सलाहकार

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, जयपुर

पण्डित विमलदादा झाँझरी, उज्जैन

श्री चिरंजीलाल जैन, भावनगर

श्री प्रवीणचन्द्र पी. वोरा, देवलाली

श्री वसन्तभाई एम. दोशी, मुम्बई

श्री श्रेयस् पी. राजा, नैरोबी

श्री विजेन वी. शाह, लन्दन

मार्गदर्शन

डॉ. किरीटभाई गोसलिया, अमेरिका

पण्डित अशोक लुहाड़िया, मङ्गलायतन

अङ्क के प्रकाशन में सहयोग

श्रीमती मंगलाबेन

नानालाल पारेख

ए-7, विवेकानन्द पार्क-3, डॉ. अम्बेडकर रोड, नेहरू मेमोरियल हॉल के सामने,

पूना - 411001 (महा.)

क्या - कहाँ

अध्यात्म-भावना 5

आनन्द कहाँ है और 11

श्री समयसार नाटक 16

सम्मेदशिखरजी पर विशेष 20

कवि परिचय 24

बाल वाटिका 25

जिस प्रकार-उसी प्रकार 26

समाचार-दर्शन 28

शुल्क :

एक प्रति : 07.00 ₹

आजीवन (15 वर्ष) : 1000.00 ₹

(गतांक 12 से आगे)

परम शान्तिदायिनी
अध्यात्म-भावना

भगवान श्री पूज्यपादस्वामी रचित 'समाधिशतक' पर
परमपूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के
अध्यात्म भरपूर वैराग्य प्रेरक प्रवचनों का सार
[वीर संवत् २४८२, अषाढ़ शुक्ला १३ शुक्रवार]

ज्ञानी अन्तरात्मा अपने आत्मा को निरन्तर शरीर से भिन्न ही देखता है- ऐसा कहा। अब, वहाँ कोई प्रश्न पूछे कि—यदि अन्तरात्मा स्वयं अपने आत्मा का ऐसा अनुभव करते हैं तो मूढ़ आत्माओं को उसका प्रतिपादन करके क्यों नहीं समझा देते—कि जिससे वे अज्ञानी भी उसे जान लें!—यदि स्वयं समझ गये तो दूसरे को भी क्यों नहीं समझा देते? उसके उत्तर में आचार्यदेव पूज्यपादस्वामी कहते हैं कि:—

अज्ञापितं न जानन्ति यथा मां ज्ञापितं तथा।
मूढात्मानस्ततस्तेषां वृथा मे ज्ञापनश्रमः ॥58॥

जिन्होंने शरीरादि से भिन्न आत्मस्वरूप को जाना है—ऐसे अनुभवी धर्मात्मा विचार करते हैं कि—अहो! यह अचिन्त्य आत्मतत्त्व जगत को दुर्लभ है, वचन और विकल्प से वह पार है।—ऐसे स्वानुभवगम्य चैतन्यतत्त्व को मूढ़ जीव जिस प्रकार मेरे बतलाये बिना नहीं जानते, उसी प्रकार मेरे बतलाने से भी वे नहीं जानते; इसलिए दूसरे को समझाने का मेरा श्रम (-विकल्प) व्यर्थ है।

तीर्थंकर तो समवसरण में समानरूप से धारावाही उपदेश देकर समझाते थे, तथापि सब जीव नहीं समझे; जिनकी योग्यता थी, वे ही समझ पाये। जब तीर्थंकर के उपदेश से भी वे जीव नहीं समझे, तब मुझसे तो क्या समझेंगे? मेरे प्रतिपादन करने से भी वे मूढात्मा आत्मस्वरूप को नहीं जान

सकते; इसलिए दूसरों को समझाने का मेरा श्रम व्यर्थ ही है। सामने वाले जीव की योग्यता के बिना किसी की शक्ति नहीं जो उसे समझा सके! धर्मी को उपदेशादि का विकल्प उठता है, किन्तु उस विकल्प को भी वे वृथा ही मानते हैं; ऐसा नहीं मानते कि मेरे विकल्प द्वारा दूसरा समझ जाएगा। इसलिए विकल्प पर जोर नहीं है किन्तु उस विकल्प को भी तोड़कर चिदानन्दस्वरूप में ही स्थिर होना चाहते हैं।

आत्मा के ज्ञानानन्दस्वरूप में रहना ही समाधि है; दूसरे को समझाने का जो विकल्प उठता है, वह राग है; उस राग द्वारा भी बन्धन होता है; इसलिए ज्ञानी उस राग पर भार नहीं देते। अन्य कोई जीव मुझसे नहीं समझ सकते। अज्ञानी जीव स्वयं आत्मा को नहीं जानते। और मेरे कहने से भी नहीं जानते; वे जब स्वयं अज्ञान को दूर करके ज्ञान करेंगे, तब आत्मा को जानेंगे।—ऐसा अभिप्राय तो ज्ञानी का पहले से ही है और तदुपरान्त उपदेशादि शुभवृत्ति को भी असमाधिरूप जानकर छोड़ना चाहते हैं तथा चिदानन्दस्वरूप में ही स्थिर होना चाहते हैं।

ज्ञानी को अपने स्वानुभव से आत्मज्ञान हुआ है, उसमें वे निःशंक हैं। जगत माने तभी अपनी बात सच्ची और जगत न माने तो अपनी बात मिथ्या—ऐसा नहीं है। जगत के अज्ञानी न समझें तो उससे मुझे क्या? ज्ञानी को ऐसी शंका या पराश्रयबुद्धि नहीं होती कि—मैं दूसरे को समझा दूँ, तब मेरा ज्ञान सच्चा अथवा दूसरे मुझे मानें, तब मेरा ज्ञान सच्चा। उनके अन्तर में से तो आत्मा की साक्षी आ गयी है। और ज्ञानी ने जान लिया है कि—अहो! यह चैतन्यतत्त्व तो स्वसंवेदनगम्य ही है; किसी वाणी या विकल्प द्वारा वह ज्ञात नहीं होता; इसलिए जब दूसरे अज्ञानी जीव स्वयं अन्तर्मुख होकर समझेंगे, तभी आत्मस्वरूप उनकी समझ में आयेगा। ज्ञानी उपदेश दें, वहाँ अज्ञानी को ऐसा लगता है कि—'यह ज्ञानी बोलते हैं, ज्ञानी राग करते हैं'—इस प्रकार वह वाणी तथा राग से ही ज्ञानी को जानता है, किन्तु ज्ञानी

का स्वरूप तो राग से और वाणी से पार अकेला ज्ञानानन्दमय है, उसे वह नहीं जानता।

दूसरे स्वीकार करें तो मेरा सच्चा—ऐसी शंका ज्ञानी को नहीं है, तथा मैं दूसरों को समझा दूँ—ऐसी बुद्धि भी ज्ञानी को नहीं है; इसलिए वे तो जानते हैं कि—दूसरों को समझाने का मेरा विकल्प वृथा है। स्वयं भाषा का अवलम्बन तोड़कर चैतन्योन्मुख हुए, तब आत्मा को समझा और दूसरे जीव भी भाषा का अवलम्बन छोड़कर अन्तर्मुख होंगे, तभी समझेंगे-मुझसे नहीं रुकते। ऐसा जानने के कारण ज्ञानी को दूसरों के समझाने का आग्रह नहीं होता। अज्ञानी जीव कभी सभा में उपदेश दे रहा हो और बहुत से लोग सुन रहे हों, वहाँ उत्साह आ जाता है कि मैंने अनेक जीवों को समझाया। लेकिन उसे यह खबर नहीं है कि—अरे, मैं तो इस विकल्प और वाणी—दोनों से पार मैं ज्ञायकस्वरूप हूँ और दूसरे जीव भी वाणी तथा विकल्प से पार ज्ञायकस्वरूप हैं; वे वाणी या विकल्प द्वारा ज्ञायकस्वरूप को नहीं समझ सकते। देखो, यह ज्ञानी का भेदज्ञान! उपदेश द्वारा मैं दूसरों को समझा सकता हूँ—ऐसा ज्ञानी नहीं मानते; उनको तो चैतन्य का चिन्तन तथा एकाग्रता ही परम प्रिय है।—ऐसी अध्यात्म-भावना ही परम शान्तिदायिनी है और उसका नाम समाधि है।

सम्यक्त्वी छोटा बालक हो तो वह भी राग से और शरीरादि से पार अपना स्वरूप जानता है; इसलिए वह शरीरादि की क्रिया से तथा राग से उदासीन ही रहता है। जिन मूढ़ जीवों में योग्यता नहीं थी, वे तो साक्षात् सर्वज्ञदेव के उपदेश से भी नहीं समझ सके। अहो, अन्तर का यह ज्ञानतत्त्व! वह मैं दूसरों को कैसे बतलाऊँ? वह तो स्वसंवेदन का ही विषय है।—ऐसी प्रतीति होने से उन्हें जड़बुद्धि जीवों को समझा देने का आग्रह नहीं होता; जड़बुद्धि-मूढ़ जीवों के साथ वाद-विवाद करना उन्हें व्यर्थ मालूम होता है, इसलिए वे तो स्वयं अपना आत्महित साधने में ही तत्पर हैं... आत्महित का

साधन ही उनका मुख्य विषय है—उपदेशादि की वृत्ति को वे मुख्यता नहीं देते।

प्रश्न : ज्ञानी भी उपदेश तो देते हैं ?

उत्तर : भाई, ज्ञानी अपने ज्ञानानन्दस्वरूप के अतिरिक्त एक विकल्प के भी कर्ता नहीं हैं और न भाषा के ही कर्ता हैं। किञ्चित् विकल्प आने पर उपदेश निकलता है, किन्तु उस समय ज्ञानी को तो अपने चैतन्यतत्त्व की ही भावना है—ऐसी ज्ञानी की अन्तरभावना को तू नहीं जानता, क्योंकि वाणी से और राग से पार ऐसे चैतन्यतत्त्व की तुझे खबर नहीं है। विकल्प और वाणी के चक्कर में ज्ञानी कभी चैतन्य को नहीं चूकते ॥58॥

✦✦✦

पुनश्च, विकल्प उठने पर ज्ञानी-अन्तरात्मा ऐसा विचार करता है कि—

यद् बोधयितुमिच्छामि तन्नाहं यदहं पुनः।
ग्राह्यं तदपि नान्यस्य तत्किमन्यस्य बोधये ॥59॥

मैं जिसे समझना चाहता हूँ, वह विकल्पारूढ़ आत्मा या शरीरादिक मैं नहीं हूँ; वाणी में तो विकल्प से और भेद से कथन आता है, उससे कहीं आत्मा पकड़ में नहीं आता; इसलिए वाणी और विकल्प द्वारा मैं क्या समझाऊँ ? जो स्वसंवेदनगम्य आत्मतत्त्व है, वह दूसरे जीवों को वाणी से या विकल्प से ग्राह्य नहीं है, तो फिर उन्हें मैं कैसे समझाऊँ ?

—इस प्रकार तत्त्वज्ञानी अन्तरात्मा विकल्प की और भाषा की व्यर्थता समझते हैं कि—अरे, जिस आनन्द का अनुभव मुझे हुआ है, वह मैं दूसरों को शब्दों द्वारा कैसे बतलाऊँ ? विकल्प भी आत्मा के स्वरूप में नहीं है। आत्मा का शुद्ध आनन्दस्वरूप विकल्प में या शब्दों में नहीं आ सकता; वह तो स्वसंवेदन में ही आता है, इसलिए अन्य जीवों को उपदेश देने का मुझे क्या प्रयोजन है ? इस प्रकार धर्मात्मा, विकल्प की ओर का उत्साह छोड़कर चैतन्यस्वभाव में सावधानी तथा उत्साह बढ़ाता है और उसमें एकाग्रता करता है।

देखो, ऐसे भानपूर्वक ज्ञानी का उपदेश कुछ अलग प्रकार का ही होता है; वे आत्मा को अन्तर्मुख होने के लिये ही कहते हैं। बहिर्मुख वृत्ति में आत्मा को किञ्चित् लाभ नहीं है; इसलिए वाणी और विकल्प का अवलम्बन छोड़कर परम महिमापूर्वक चैतन्यतत्त्व का ही अवलम्बन करो... ऐसा ज्ञानी कहते हैं। ज्ञानी होने के पश्चात् उपदेशादि का प्रसंग आता ही नहीं—ऐसी बात नहीं है; किन्तु उन उपदेशादि में ज्ञानी को ऐसा अभिप्राय नहीं है कि मुझसे कोई समझ लेगा! अथवा इस विकल्प से मेरे चैतन्य को लाभ होगा—ऐसा भी वे नहीं मानते। ज्ञानी जानते हैं कि—बहिरात्मा तो पराश्रयबुद्धि की मूढ़ता के कारण अन्तरोन्मुख नहीं होते, इसलिए मेरे समझाने से भी वे आत्मस्वरूप को नहीं समझेंगे। जब वे स्वयं पराश्रयबुद्धि छोड़कर, अन्तर्मुख होकर, स्वसंवेदन करेंगे, तभी प्रतिबोध प्राप्त कर सकते हैं।

बहिर्बुद्धिवाले अज्ञानी जीवों को किञ्चित् ज्ञान होने पर ऐसा लगता है कि—हम दूसरों को समझा दें! और जब अधिक लोग सुननेवाले हों तो मानते हैं कि—बहुत धर्म हो गया!—इस प्रकार अकेली वाणी और विकल्प पर उनका जोर जाता है; किन्तु वाणी और विकल्प से पार आत्मा के ऊपर भार नहीं देते। जगत के अन्य मूढ़ जीव भी उसकी भाषा पर मोहित हो जाते हैं और कहते हैं कि कितना महान धर्मात्मा है, लेकिन इस प्रकार धर्मात्मा का माप नहीं निकलता। कोई महान धर्मात्मा आत्मानुभवी हो, तथापि वाणी का योग अति अल्प होता है। मूक केवली को केवलज्ञान होने पर भी वाणी का योग नहीं होता और किसी धर्मात्मा को वाणी का योग हो तथा उपदेश की वृत्ति भी उठे, परन्तु उपदेश की वृत्ति पर उनका जोर नहीं है; मेरे उपदेश से दूसरा समझ जायेगा—ऐसा अभिप्राय नहीं है। अरे, अतीन्द्रिय और शब्दातीत ऐसा चैतन्यतत्त्व, वाणी द्वारा कैसे बतलाया जा सकता है? इस प्रकार चैतन्य की महत्ता जिसने नहीं जानी, उसी को ऐसा भ्रम होता है कि वाणी या विकल्प द्वारा चैतन्यतत्त्व समझ में आ जायेगा। किन्तु भाई, चैतन्य

के अनुभव में वाणी का प्रवेश नहीं है; विकल्प का भी प्रवेश नहीं है। श्रीमद् राजचन्द्रजी कहते हैं कि—

''नहिं दे तू उपदेश को प्रथम लेहि उपदेश,
सबसे न्यारा अगम है वो ज्ञानी का देश॥''

कुछ लोगों का शास्त्र पढ़ते या सुनते समय अन्तर में ऐसा अभिप्राय होता है कि—यह बात समझकर, धारणा में लेकर दूसरों को समझा दूँ। अरे, सत् को समझकर चैतन्योन्मुख होने का अभिप्राय नहीं है, किन्तु दूसरों को समझाने का अभिप्राय है; इसलिए शास्त्र पढ़ते या सुनते समय भी वह अपनी बहिर्मुख वृत्ति का ही पोषण करता है। अहा! यहाँ तो धर्मात्मा की कैसी उच्च भावना है! जगत से उदास होकर चैतन्य में ही समा जाना चाहते हैं। मुझे जगत से क्या मतलब? और चैतन्यतत्त्व भी इतना गहरा-गम्भीर है कि वाणी द्वारा दूसरों को नहीं समझाया जा सकता और कदाचित् वाणी के निमित्त से अन्य जीव समझें तो वह वाणी, मैं नहीं हूँ, तथा सामने वाला जीव भी उस वाणी का अवलम्बन रखकर नहीं समझा है, किन्तु वाणी का अवलम्बन छोड़कर चैतन्योन्मुख होने पर ही समझा है।—इस प्रकार वाणी और विकल्प तो व्यर्थ हैं—ऐसा जानकर, धर्मी जीव निजस्वरूप में ही रहना चाहता है। दूसरे को समझाने का विकल्प या दूसरे से सुनने का विकल्प—वे सब विकल्प, चैतन्यस्वरूप से बाह्य हैं। विकल्पों द्वारा चैतन्यस्वरूप ग्राह्य नहीं है; वह तो स्वसंवेदन ग्राह्य है। भगवान की दिव्यध्वनि भी तभी धर्म का निमित्त होती है कि जब जीव अन्तर्मुख होकर स्वसंवेदन करे। ऐसे स्वसंवेद्य तत्त्व का प्रतिबोध मैं दूसरों को कैसे दूँ? बाह्य चेष्टा में मैं किसलिए रुकूँ? वाणी और विकल्प तो चैतन्यस्वरूप में प्रविष्ट होने के लिये व्यर्थ हैं—ऐसा जानकर धर्मी जीव निजस्वरूप की भावना में ही तत्पर रहता है। ऐसी अध्यात्म भावना परम शान्तिदायिनी है।●

साभार : आत्मधर्म (हिन्दी), वर्ष -18, अंक-6

आनन्द कहाँ है और आदरणीय क्या है ?

[वीर सं. २४८० माघ शुक्ला ७ के दिन वडिया ग्राम में पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के प्रवचन से]

आत्मा का स्वभाव चिदानन्द है; ज्ञान और आनन्द उसके स्वभाव में ही भरे हैं; किन्तु अनादि से उसे भूलकर, बाह्य में आनन्द मानकर जीव, संसार में भटक रहा है। अनादि से संसार में परिभ्रमण करते हुए आत्मभान के सिवा अन्य सबकुछ किया; स्वर्ग में गया और नर्क में भी गया, रंक हुआ और राजा भी हुआ; किन्तु आत्मा के भान बिना उसे कहीं भी शान्ति नहीं हुई। शान्ति तो आत्मा के स्वभाव में है, उसे पहिचाने तो शान्ति प्रगट हो। शान्ति जहाँ भरी हो, वहीं से प्रगट होती है—बाहर से नहीं आती। जिस प्रकार चने में मिठास भरी है, इसलिए उसे सेकने पर उसी में से बाहर आती है; कड़ाही में से मिठास नहीं आती। उसी प्रकार आत्मा स्वयं ही आनन्द स्वभाव से भरपूर है; उसकी श्रद्धा करके उसमें एकाग्र होने पर उसी में से वह आनन्द प्रगट होता है; कहीं बाहर में नहीं आता। आत्मा के सिवा किन्हीं बाह्य विषयों में आनन्द मानना, वह भ्रान्ति है। पर में आनन्द मानने से जो राग होता है, उस राग में भी आनन्द नहीं है। हिंसादि पाप का राग तो दु:खदायक है और दया-दानादि का पुण्य राग होता है, वह भी दु:खरूप है; उसमें चैतन्य का आनन्द या शान्ति नहीं है।

आत्मा के स्वभाव में आनन्द है, उसे भूलकर बाह्य में और राग में आनन्द माना, तथापि जीव के स्वभाव में जो आनन्द भरा है, उसका नाश नहीं हो गया है। जिस प्रकार कच्चे चने का स्वाद कसैला लगता है, तथापि उसके स्वभाव में जो मीठा स्वाद है; उसका नाश नहीं हो गया है; उसे सेकने से वह मिठास बाहर प्रगट हो जाती है। उसी प्रकार अज्ञानभाव के कारण अनादि से जीव संसार में दु:खी है, तथापि उसमें आनन्दस्वभाव भरा है;

सम्यक्श्रद्धा, ज्ञान, चारित्र द्वारा आत्मा का प्रतपन करने से उस आनन्द का अनुभव होता है। प्रथम अन्तर्मुख स्वभाव की श्रद्धा करके सम्यग्दर्शन करते ही निर्विकल्प आनन्द के अंश का अपूर्व स्वाद आता है, और पूर्णाननद प्रतीति में आ जाता है कि-अहो! सिद्ध भगवान जैसा परिपूर्ण आनन्द तो यहीं भरा है। ऐसे आत्मा के अतीन्द्रिय आनन्द का भान होने से बाह्य विषय तुच्छ भासित होते हैं; उनमें कहीं स्वप्न में भी सुख भासित नहीं होता। आनन्दनिधान चैतन्यमूर्ति आत्मा की रुचि छोड़कर बाह्य की रुचि करना संसार का कारण है और आत्मा के आनन्द स्वभाव की रुचि करना, वह मोक्ष का कारण है।

भाई! अनादिकाल से तू संसार में भटक रहा है, उसमें तेरे आत्मा का आनन्दस्वभाव भी तेरे साथ ही साथ है; आत्मा की शक्ति में जो आनन्द-स्वभाव भरा है, वह कभी उससे पृथक् नहीं होता; किन्तु अनादिकाल से जीव ने कभी उस ओर उन्मुख होकर स्वशक्ति की संभाल नहीं की; इसलिए उस आनन्द का अनुभव नहीं होता। मेरे आत्मा का आनन्द-स्वभाव ज्यों का त्यों है—इस प्रकार स्वभावशक्ति की संभाल करके उसमें एकाग्र होने से आत्मानन्द का अनुभव होता है।

यह शरीर जड़ है; इसमें कहीं आत्मा का आनन्द नहीं है। शरीर, आत्मा से पृथक् है, उसकी कोई क्रिया आत्मा नहीं कर सकता। शरीर की क्रियायें स्वयं होती हैं; वहाँ 'इसे मैं करता हूँ'—इस प्रकार अज्ञानी उसका अभिमान करता है; उसे जड़ से भिन्न आत्मस्वरूप की खबर नहीं है। भाई! तेरा आत्मा तो ज्ञान है, वह जड़ में क्या करेगा? शरीर में रोग हो, उसे ज्ञान जानता है किन्तु रोग मिटाने की उसकी शक्ति नहीं है। शरीर में रोग हो जाये, ऐसी इच्छा न होने पर भी रोग हो जाता है; उसे आत्मा नहीं रोक सकता। निकट रहने वाले इस शरीर का कार्य भी जीव के आधीन नहीं होता, तब फिर अन्य परपदार्थों के कार्य आत्मा करे—यह तो बात ही कहाँ रही? जड़-चेतन की एकाग्रता की एकत्वबुद्धि से अज्ञानी को अनादिकाल से भ्रमणा का रोग लग

गया है; वह रोग कब दूर हो, उसकी यह बात है। मैं तो ज्ञानस्वरूप ज्ञाता हूँ, ज्ञान के सिवा अन्य कोई कार्य मेरा नहीं है; यह शरीरादि परपदार्थ मेरे ज्ञान के ज्ञेय हैं, किन्तु उनके कार्य मेरे नहीं हैं, वे पदार्थ मुझसे पृथक् हैं; मेरा शुद्ध चिदानन्द तत्त्व ही मेरा स्वज्ञेय है और उस स्वज्ञेय में ज्ञान के एकता से जो वीतरागी निर्मल आनन्ददशा प्रगट हुई, वह मेरा कार्य है।—ऐसा यथार्थ अन्तरभान करने से अनादिकालीन भ्रमणा नष्ट हो जाती है, और पर के कार्य मैं करता हूँ—ऐसा अभिमान नहीं होता। ऐसा भान करना, वह अपूर्व धर्म का प्रारम्भ है, और उसी से आत्मा की महत्ता है।

अज्ञानी लोग चैतन्यस्वभाव की महिमा नहीं जानते, इसलिए लक्ष्मी आदि बाह्य संयोगों से आत्मा की महत्ता मानते हैं; किन्तु वास्तव में बाह्य संयोगों से आत्मा की महत्ता नहीं है। अन्तरस्वभाव की प्रभुता का अवलम्बन करने से जो सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप वीतरागी धर्म प्रगट हो, उसके द्वारा आत्मा की महत्ता है और उसी में आत्मा की शोभा है। देखो, जगत में महान चक्रवर्ती और इन्द्र भी मुनिराज आदि सन्तों के चरणों में नमस्कार करते हैं; मुनिराज के पास तो पैसे आदि का कोई संयोग नहीं है और चक्रवर्ती के यहाँ धन के ढेर हैं, तथापि वे चक्रवर्ती, मुनि के चरणों में क्यों नमस्कार करते हैं ?—क्योंकि मुनिराज के निकट आत्मा के सम्यग्दर्शन -ज्ञान-चारित्ररूप धर्म की अधिकता है; इसलिए चक्रवर्ती भी उनके चरणों में वन्दन करते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि पुण्य के फल की अपेक्षा धर्म की अधिक महिमा है; संयोग से आत्मा की महत्ता नहीं है किन्तु आत्मा में जो वीतरागी धर्म प्रगट हुआ, उसी से आत्मा की महत्ता है; पुण्य या पुण्य के फल आदरणीय या वन्दनीय नहीं हैं, किन्तु वीतरागी धर्म ही आदरणीय और वन्दनीय है। इसलिए जो जीव, पुण्य का या पुण्य के फल का आदर न करके आत्मा का वीतरागी धर्म ही आदरणीय है—ऐसा समझता है, उसने धर्मात्मा का सच्चा आदर या नमस्कार किया है; यदि पुण्य का या संयोग का आदर करे तो उसने धर्मात्मा का सच्चा आदर या नमस्कार नहीं किया है। धर्म और

पुण्य—दोनों वस्तुयें पृथक् हैं—यह बात भी अनेक जीवों की समझ में नहीं आती, और पुण्य को ही धर्म मानकर उसका आदर करते हैं; ऐसे जीव तो मिथ्यादृष्टि हैं; वे पुण्य करें तो भी संसार में ही भटकते हैं। जिन्हें अन्तर में संयोग से पार चिदानन्दस्वभाव का भान है—ऐसे धर्मात्मा को महान पुण्यवान भी नमस्कार करते हैं; इसलिए पुण्य आदरणीय नहीं है किन्तु आत्मा का वीतरागी धर्म ही आदरणीय है।

जगत में धन-मकान-स्त्री आदि बाह्य वस्तुयें तो आत्मा से पृथक् ही हैं; वे कहीं आत्मा में नहीं आ गई हैं और उनमें आत्मा का संसार नहीं है; किन्तु स्व-पर की भिन्नता से च्युत होकर आत्मा उनकी ममता करता है, वह ममत्वभाव ही आत्मा का संसार है। स्व-पर की भिन्नता का भान करके जिसने पर की ममता छोड़ दी और अपने चिदानन्दस्वभाव में एकता करके समता प्रगट की, उसके संसार का नाश होकर मोक्षमार्ग प्रगट होता है। बाह्य में गृह-कुटुम्ब-लक्ष्मी छोड़कर वन में चला जाये तो लोग कहते हैं कि उसने संसार छोड़ दिया; किन्तु ज्ञानी कहते हैं कि चैतन्यस्वरूप के भान बिना उसने संसार छोड़ा ही नहीं! परवस्तु मेरी थी और उसे मैंने छोड़ दिया—ऐसी स्व-पर की एकत्वबुद्धि से मिथ्यात्वभावरूप संसार तो उसके साथ ही साथ है। और ज्ञानी सम्यक्त्वी गृहवास में हो—व्यापार-धन्धा और कुटुम्ब के बीच रहते हों, तथापि अन्तर के चिदानन्दस्वभाव की दृष्टि में उनको सारा संसार छूट गया है; अभी अस्थिरता के राग जितना अल्प संसार है, किन्तु 'मैं तो चिदानन्दस्वरूप ही हूँ, राग या संयोग में नहीं हूँ'—ऐसी अन्तरस्वभाव की दृष्टि के परिणमन में संसार का स्वामित्व छूट गया है। ऐसी अन्तर्दृष्टि प्रगट किये बिना चाहे जितना बाह्यत्याग और राग की मन्दता हो, तथापि उसे बिलकुल धर्म नहीं होता और संसार का अन्त नहीं आता; और ऐसी अपूर्व अन्तर्दृष्टि प्रगट करने से अल्पकाल में ही संसार का अन्त आकर मोक्षदशा प्रगट होती है।

जीव ने अन्तर में आल्हाद लाकर अपने ज्ञानानन्दस्वरूप की बात पहले कभी नहीं सुनी है, पर की ही बात सुनी है। चैतन्यस्वरूप का यथार्थ श्रवण भी जीव को महँगा है, तब फिर उसे समझकर अन्तर में उसकी रुचि का प्रयत्न कैसे करे? अहो! जीव को ऐसी बात का श्रवण भी कभी-कभी महाभाग्य से प्राप्त होता है। प्रथम तो अन्तरंग स्वीकृतिपूर्वक सत्य का श्रवण करके सत्य-असत्य का निर्णय करना चाहिए, फिर उसका अन्तरपरिणमन होता है। किन्तु अभी जिसका श्रवण ही विपरीत हो और निर्णय में भूल हो, उसके सत्य का परिणमन तो कहाँ से होगा? जीव अनादिकाल से अन्य प्रयत्नों में लग रहा है किन्तु अपने स्वभाव की समझ का यथार्थ प्रयत्न उसने कभी नहीं किया, इसलिए उसकी समझ की बात कठिन मालूम होती है और कोई बाह्य से धर्म मनवाये तो वह बात तुरन्त जम जाती है। किन्तु भाई! पुण्य से हित होता है-ऐसी उलटी बात तो तुझे अनादि से जमी ही है; अन्तर के चिदानन्दतत्त्व की समझ बिना तेरे भवभ्रमण का अन्त नहीं आ सकता! इसलिए उसकी रुचि करके सत्समागम से उसे समझने का प्रयत्न कर तो अन्तर का चैतन्यस्वभाव अवश्य समझ में आ सकता है। जगत की दरकार न करके एकबार आत्मा की दरकार कर तो आत्मस्वभाव का अनुभव हुए बिना नही रहेगा।

इस विधि के सिवा अन्य किसी विधि से धर्म नहीं होगा। जिस प्रकार हलुवा आदि बनाना हो तो पहले उसकी विधि समझकर तदनुसार करते हैं, उसी प्रकार जिसे आत्मा की मुक्ति करना हो, उसे उसकी विधि प्रथम जानना चाहिए। पहले ज्ञानानन्दस्वरूप आत्मा को पहिचानकर उसकी सच्ची श्रद्धा और ज्ञान होता है, तत्पश्चात् उसमें लीनता द्वारा चारित्र होता है;—वह सम्यक्श्रद्धा-ज्ञान और चारित्र, मोक्ष का कारण है; उसमें भी पहले सम्यक्श्रद्धा करना, वह उसका मूल है; सम्यक्श्रद्धा के बिना कभी धर्म के प्रारम्भ का अंश भी नहीं हो सकता। ●

साभार : आत्मधर्म (हिन्दी), वर्ष -11, अंक-1

श्री समयसार नाटक पर पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के धारावाही प्रवचन

द्वितीय अधिकार (अजीव द्वार)

मूढ़ स्वभाव वर्णन

चेतन जीव अजीव अचेतन,
लच्छन-भेद उभै पद न्यारे।
सम्यक्दृष्टि-उदोत विचच्छन,
भिन्न लखै लखिकैं निरवारे॥
जे जगमांहि अनादि अखंडित,
मोह महामदके मतवारे।
ते जड़ चेतन एक कहैं,
तिन्हकी फिरि टेक टरै नहि टारे॥12॥

अर्थः- जीव चैतन्य है, अजीव जड़ हैं; इस प्रकार लक्षण भेद से दोनों प्रकार के पदार्थ पृथक्-पृथक् हैं। विद्वान लोग सम्यग्दर्शन के प्रकाश से उन्हें जुदे-जुदे देखते और निश्चय करते हैं, परन्तु संसार में जो मनुष्य अनादि काल से दुर्निवार मोह की तीक्ष्ण मदिरा से उन्मत्त हो रहे हैं वे जीव और जड़ को एक ही कहते हैं; उनकी यह कुटेक टालने से भी नहीं टलती है।

भावार्थः- कोई एक ब्रह्म ही ब्रह्म बतलाते हैं, कोई जीव को अंगुष्ठ प्रमाण, कोई तन्दुल प्रमाण और कोई मूर्तीक कहते हैं, सो इस पद्य में उन सबकी अज्ञानता बतलाई है ॥12॥

ज्ञाता विलास

या घटमैं भ्रमरूप अनादि,
विसाल महा अविवेक अखारौ।
तामहि और स्वरूप न दीसत,
पुग्गल नृत्य करै अति भारौ॥
फेरत भेख दिखावत कौतुक,
सौंजि लियैं वरनादि पसारौ।

मोहसौं भिन्न जुदौ जड़सौं,
चिनमूरति नाटक देखनहारौ ॥13॥

अर्थः- इस हृदय में अनादि काल से मिथ्यात्वरूप महा अज्ञान की विस्तृत नाट्यशाला है, उसमें और कोई शुद्ध स्वरूप नहीं दिखता केवल एक पुद्गल ही बड़ा भारी नाच कर रहा है, वह अनेक रूप पलटता है और रूप आदि विस्तार करके नाना कौतुक दिखाता है; परन्तु मोह और जड़ से निराला सम्यग्दृष्टि आत्मा उस नाटक का मात्र देखनेवाला है (हर्ष-विषाद नहीं करता) ॥13॥

भेदविज्ञान का परिणाम

जैसैं करवत एक काठ बीच खंड करै,
जैसैं राजहंस निरवारै दूध जलकौं।
तैसैं भेदग्यान निज भेदक-सकतिसेती,
भिन्न-भिन्न करै चिदानंद पुद्गलकौं॥
अवधिकौं धावै मनपर्यैकी अवस्था पावै,
उमगिकै आवै परमावधिके थलकौं।
याही भांति पूरन सरूप कौ उदोत धरै,
करै प्रतिबिंबित पदारथ सकलकौं ॥14॥

अर्थः- जिस प्रकार आरा काष्ठ के दो खण्ड कर देता है, अथवा जिस प्रकार राजहंस क्षीर-नीर का पृथक्करण कर देता है, उसी प्रकार भेदविज्ञान अपनी भेदक-शक्ति से जीव और पुद्गल को जुदा-जुदा करता है। पश्चात् यह भेदविज्ञान उन्नति करते करते अवधिज्ञान, मनः पर्ययज्ञान और परमावधि ज्ञान की अवस्था को प्राप्त होता है और इस रीति से वृद्धि करके पूर्ण स्वरूप का प्रकाश अर्थात् केवलज्ञानस्वरूप हो जाता है जिसमें लोक-अलोक के सम्पूर्ण पदार्थ प्रतिबिम्बित होते हैं ॥14॥

काव्य - 14 पर प्रवचन

जैसे आरा एक लकड़ी पर चलाने से उसके दो टुकड़े हो जाते हैं। उसी

प्रकार भेदविज्ञान आरा (करवत) के समान है। वह आत्मा को शरीर, कर्म, राग आदि से भिन्न कर देता है। जैसे राजहंस की चोंच में दूध और पानी भिन्न-भिन्न हो जाते हैं; उसी प्रकार भेद-विज्ञान की भेदक शक्ति से जीव और पुद्गल भिन्न हो जाते हैं। जहाँ तक भेदज्ञान नहीं है, वहाँ तक अज्ञानी शरीर, वाणी, मन, कर्म आदि मेरे हैं, ऐसा मानकर पापदृष्टि का सेवन करता है। उसको पता ही नहीं है कि शरीर और आत्मा भिन्न चीज है।

अनादि से यह शरीर, वाणी, पुण्य और पाप मेरे हैं तथा शुभ-अशुभभाव होते हैं, वे भी मेरे हैं, ऐसा मानता है, वह मिथ्यादृष्टि है। वह पापदृष्टिवाला पापी प्राणी है। वह चौरासी के अवतार में भटकनेवाला है। जो अपने ज्ञायकस्वभाव को भूलकर शुभाशुभ भावों को करता है, वह अधर्म का सेवन करता है। अधर्म, वह पाप है। उसको अपना मानकर अज्ञानी प्राणी चौरासी लाख योनियों की घाणी में पिल रहा है।

मूढ़ लोग तो ऐसा मानते हैं कि पैसेवाले सुखी हैं, आबरूवाले सुखी हैं, सुन्दर स्त्री-पुत्रादिवाला सुखी है। क्या यह बात सत्य है? नहीं यह सत्य नहीं है। यह तो उसकी मूढ़ता है। भगवान! तू अपने को भूलकर पर को निज मानकर सुख मान रहा है; परन्तु यह तेरी महान भूल है। तू विचार कर कि मैं किसको निज मानता हूँ? और वास्तव में कौन मेरा है? गुरु तुझको तेरा स्वरूप बताते हैं वह समझ! जिसमें चैतन्यप्रकाश है और जिसमें अतीन्द्रिय आनन्द की मोहर-छाप है, वह तेरा स्वरूप है।

यह अजीव अधिकार है न! यहाँ शरीर, वाणी, मन तो अजीव है ही; परन्तु जिनमें चैतन्यप्रकाश नहीं हैं ऐसे परिणाम भी अजीव है। पाप तो अचेतन है; परन्तु दया, दान, व्रत, भक्ति के पुण्य परिणाम भी चैतन्यप्रकाश से रहित होने से अचेतन है। अज्ञानी को मानना कठिन पड़े ऐसी बात है। भाई! तेरे किये भाव ही तुझे नुकसान करते हैं। इनसें भिन्न पड़ जा!

धर्मी तो जानता है कि शरीर, कर्म, आदि तो मेरे से भिन्न हैं ही; परन्तु जो पुण्य-पाप की वृत्तियाँ हैं, वे भी मेरे से भिन्न अचेतन हैं। मेरा धर्म कोई

अलग ही है। राग का एक कण भी मेल है। मेरी वस्तु उससे भिन्न है। जैसे हंस की चोंच में ऐसी खटाई है कि दूध में से पानी भिन्न पड़ जाता है। उसी प्रकार धर्मी की भेदज्ञान दृष्टि में से रागादिभाव भिन्न पड़ जाते हैं। इसीलिए धर्मी को दु:ख के मार्ग से निवृत्त और सुख के मार्ग में प्रवृत्त कहा जाता है।

ये करोड़पति कहलाते हैं, ये तो सब दु:खी हैं। करोड़ रुपये तो जड़ हैं, तो जड़ का पति तो जड़ ही होगा न! हम इज्जतवाले, हम पैसावाले, हम कुटुम्बवाले ये तेरे कितने 'वाले' हैं। हाम दाम और ठाम वाले –ये तीनों जड़ हैं। दाम अर्थात् पैसा, वह जड़ है, ठाम अर्थात् मकान, वह जड़ है और हाम अर्थात् हिम्मत, वह भी राग में रही हुई हिम्मत है। इसलिए जड़ है। भेदविज्ञान इन सबको अपनी भेदक शक्ति से भिन्न कर देता है।

भाई! यह तो अन्तर की, धीरज की बातें हैं। यह कोई 'उतावल से आम पकें' वैसा नहीं है। प्रभु! यह तेरे घर की बात है। तेरे घर में क्या है और क्या नहीं, उसकी बात परमात्मा तुझको बतलाते हैं। तू इसको बराबर झेलना, व्यर्थ मत जाने देना। तूने राग, लक्ष्मी और शरीरादि को निज मानकर मिथ्यात्व का सेवन तो अनन्त बार किया है। अब एकबार जो अनन्त काल में नहीं किया –ऐसा 'भेद–ज्ञान' का कार्य कर! प्रभु..! भेद–विज्ञान क्या कार्य करता है? कि भेद–विज्ञान अपनी भेदक शक्ति से राग और ज्ञान को भिन्न करता है।

प्रभु! तुम जाणग रीती, सहू जग देखता हो लाल..
निज सत्ता ये शुद्ध सहूने पेखता हो लाल..

प्रभु! आप प्रत्येक आत्मा को पुण्य–पाप, राग, शरीर रहित शुद्ध देखते हों। भगवान जैसा देखते हैं, वैसा जिसको देखना आता है, उसको भेदज्ञानी अथवा धर्मी कहते हैं। पाँच–पच्चीस हजार रुपये दान में देने से धर्म नहीं होता है। उसमें भी दानराशि में इसका नाम आवे, तब इसको चैन पड़े; परन्तु उस नाम में तू कहाँ घुस गया है? परन्तु मूर्खों के गाँव कोई अलग होते हैं? नाम देखकर इसको शान्ति होती है।

क्रमश:

मानसिक शान्ति के अनूठे केन्द्र - जैन तीर्थ

सच्ची भावनाओं से जब भी कोई मनुष्य तीर्थ पर जाता है तो महसूस करता है कि एक तीर्थ तो वह है जो बस्ती में दिखाई देता है, दर्शनीय स्थलों पर, नदी के घाटों पर, मन्दिरों में या पूजा गृहों में। जहाँ कोई भी जायेगा सैलानी और घूमकर लौट आयेगा। यह तीर्थ का मृण्मय रूप है और एक उसका चिन्मयरूप है, जहाँ वहीं पहुँच पायेगा, जो अन्तस्थ होगा, जो ध्यान में प्रवेश करेगा। जो ध्यान में बैठकर गया, भगवत् भाव से भरकर गया, वह अवश्यमेव मानसिक शान्ति प्राप्त करेगा। साधक के साधना पथ का स्मरण कराने के लिये ही ये तीर्थ बने हैं। उन तीर्थों पर पहुँच कर हमें उनकी साधना का सहज ही स्मरण हो आता है तथा वहाँ निराकुलतापूर्वक हम निर्णय कर सकते हैं कि जीवन को सुखी, स्वाधीन और सफल बनाने का मार्ग तो यह है, जो इन साधकों ने अपनाया तब हमारी भावना सफल होती है और हमें संसार ताप से तनिक शीतलता मिलती है। जिनकी संगति पाकर ये रजकण भी पूजने योग्य बन गए। अत: उन साधकों को एवं उनकी साधना को कोटि-कोटि प्रणाम।

जिनमन्दिरों का वैभव समेटे दिगम्बर जैन संस्कृति की अमूल्य विरासत तीर्थक्षेत्र है। इनके दर्शन से दर्शकों को अपार आत्मिक शान्ति प्राप्त होती है।

शान्ति के केन्द्र किस प्रकार हैं ? -

जैन सिद्धान्त साक्षात् धर्म विज्ञानमय है। उसमें अन्धेरे में निशाना लगाने का उद्योग कहीं नहीं है। वह साक्षात् सर्वज्ञ-सर्वदर्शी तीर्थंकरों की देन है। इसलिए उनमें पद-पद पर वैज्ञानिक निरूपण मिलता है। हर कोई जानता है कि जिसने किसी मनुष्य को देखा नहीं, वह उसको पहचान नहीं सकता। मोक्षमार्ग के पर्यटक का ध्येय परमात्मस्वरूप प्राप्त करना होता है। तीर्थंकर भगवान उस परमात्मस्वरूप के प्रत्यक्ष आदर्श जीवनमुक्त परमात्मा होते हैं। अतएव उनका दर्शन करना एक मुमुक्षु के लिए उपादेय है। उनका दर्शन उसे परमात्मदर्शन कराने में कारणभूत होता है। इस काल में उनका प्रत्यक्ष दर्शन सुलभ नहीं हैं। इसलिए ही उनकी तदाकार स्थापना करके मूर्तियों द्वारा उनका दर्शन किया जाता

है। तीर्थ स्थानों में उनकी उस ध्यानमयी शान्त मुद्रा को धारण करनेवाली मूर्तियाँ विराजमान हैं। वे मूर्तियाँ भक्तजनों के हृदय में सुख और शान्ति की पुनीत धारा बहा देती हैं।'' भक्तहृदय उन मूर्तियों के सम्मुख पहुँचते ही अपने आराध्यदेव का साक्षात् अनुभव करता है। उनका गुण गाकर अलभ्य आत्मतुष्टि पाता है।'' पाठशाला में बच्चे भूगोल पढ़ते हैं। उन देशों का ज्ञान नक्शे के द्वारा कराया जाता है, जिनको उन्होंने देखा नहीं है। उस अतदाकार स्थान अर्थात् नक्शे के द्वारा वह उन विदेशों का ठीक ज्ञान उपार्जन करते हैं। ठीक इसी तरह जिनेन्द्र की प्रतिमा भी उनका परिज्ञान कराने में कारणभूत है। इसीलिए जिनमन्दिरों में जिन प्रतिमाएँ होती हैं। उनके आधार से एक गृहस्थ ज्ञानमार्ग में आगे बढ़ता है। तीर्थ स्थानों पर भी इसीलिए अति मनोज्ञ और दर्शनीय मूर्तियों का निर्माण किया गया है। वहाँ की मूर्तियों की कलाकारी इतनी बारीकी के साथ की गयी है कि हम उन्हें देखकर बगैर विस्मित हुए नहीं रह सकते। तीर्थों में स्थापित मूर्तियों में खास बात तो यह है कि इनकी शान्ति और सौम्य छवि दर्शकों के मन पर धर्म के प्रति अगाध श्रद्धा का साम्राज्य स्थापित करती है।

पहले तो तीर्थस्थान स्वयं पवित्र हैं। उस पर वहाँ आत्म-संस्कारों को जागृत करनेवाली बोलती सी जिन प्रतिमाएँ होती हैं। उनके दर्शन से तीर्थयात्री को महती निराकुलता का अनुभव होता है। वह साक्षात् सुख का अनुभव करता है।

तीर्थयात्रा से अन्य लाभ -

1. तीर्थयात्रा शिक्षा, शान्ति, सूचना और सांस्कृतिक चेतना का महत्त्वपूर्ण स्रोत रही है। दूरस्थ ग्रामीण परिवेश में रहनेवाले असंख्य लोगों को समूचे भारत और उसके विभिन्न रीति रिवाजों जीवन शैलियों और प्रयासों को जानने का अवसर प्रदान करती है।

2. पारम्परिक ज्ञान का संरक्षण, उसका संवर्धन, और अगली पीढ़ी में उसका प्रसार, तीर्थक्षेत्र सकारात्मक ऊर्जा के भण्डार होते है, जहाँ से हम ऊर्जावान होते हैं और जीवन शक्ति प्राप्त होती है। प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह नास्तिक ही क्यों न हो तीर्थस्थलों का पर्यटन के उद्देश्य से ही भ्रमण अवश्य करना चाहिए।

3. देशाटनादि के लाभ भी होते हैं। देशाटन में बहुत सी नई बातों का अनुभव होता है और नई वस्तुओं को देखने का अवसर मिलता है।

4. यात्री का वस्तुज्ञान और अनुभव बढ़ता है और उसमें कार्य करने की चतुरता और क्षमता आती है।

5. तीर्थयात्रा करने से हृदय से विचार संकीर्णता दूर हो जाती है। उसकी वृत्ति उदार होती है। वह आलस्य और प्रमाद का नाश करके साहसी बन जाता है, परहित के लिए वह तत्पर रहता है।

6. अनेक स्थानों के सामाजिक रीति-रिवाजों और भाषाओं का ज्ञान भी सुगमता से होता है।

7. तीर्थयात्रा हमारे सामाजिक सम्बन्धों के मौजूदा स्वरूप को सुदृढ़ करती है।

8. मानसिक तनाव से छुटकारा मिलता है, मैंने स्वयं मानसिक तनावग्रस्त होने पर अहिछत्र व कम्पिलाजी के दर्शन किये तो मेरा मन हल्का हुआ। यह मेरा स्वयं का अनुभव है।

जैन लोग अपने पूर्वजों के गौरवमय अस्तित्व का परिचय प्राचीन स्थानों का दर्शन करके ही पा सकते हैं। यह तीर्थ यात्रा में सुलभ है। साथ ही जैन समाज की उपयोगी संस्थाओं। जैसे जैन महाविद्यालय, छात्रावास श्राविकाश्रम, अनाथाश्रम आदि देखने का अवसर मिलता है। इस दिग्दर्शन से दर्शक के हृदय में आत्मगौरव की भावना जागृत होना स्वाभाविक है। वह अपने गौरव को जैन समाज का गौरव समझेगा और ऐसा उद्योग करेगा, जिसमें धर्म और तीर्थ की प्रभावना हो।

तीर्थों के प्रति हमारा दायित्व -

तीर्थों की सुरक्षा हमारा नैतिक दायित्व है। यदि हम एकजुट होकर और पंथवाद का व्यामोह छोड़कर तीर्थसंबल, तीर्थ जीर्णोद्धार और तीर्थ सुरक्षा के विकास में कदम बढ़ायें तो कुछ भी असम्भव नहीं है। हृदय में जब सच्ची श्रद्धा फूटती है, तब मनुष्य के लिए कोई भी कार्य असम्भव नहीं जो सफल न हो सके। यही बात तीर्थदर्शन पर भी लागू होती है और इसके लिए सर्वप्रथम संस्कारों की

महती आवश्यकता है अन्यथा हमारे तीर्थ व मन्दिर अपने मूल अस्तित्व से भटककर अन्य कर्म की स्थली बन जायेंगे। हमें अपनी सुविधाभोगी प्रवृत्ति तजनी होगी। अन्यथा ये तीर्थ हमें त्याग देंगे। हमें तीर्थों की मर्यादा व पवित्रता का ध्यान रखना होगा। तभी ये तीर्थ जीवन्त रहेंगे। तीर्थ हमारे जैन संस्कृति के प्राण हैं, जो हजारों वर्षों से खड़े हुए तीर्थंकरों व मुनियों की त्याग-तपस्या की यशोगाथाओं की जीवन्त मूर्ति हैं।

उपसंहार -

तीर्थक्षेत्र की भूमिका के स्पर्श मात्र से संसार ताप नाश हो जाता है। परिणाम निर्मल, ज्ञान, उज्ज्वल, बुद्धि स्थिर, मस्तिष्क शान्त और मन पवित्र हो जाता है। पूर्वबद्ध पाप तथा अशुभ कर्म नष्ट हो जाते हैं। दुखित प्राणी को आत्मशान्ति प्राप्त होती है। ऐसे तीर्थ क्षेत्रों की वन्दना करने से उन महापुरुषों, तपस्वियों के आदर्श से अनुप्रेरित होकर आत्मकल्याण की भावना उत्पन्न होती है। तीर्थभ्रमण का वास्तविक उद्देश्य तो आत्मिक शान्ति के लिए है। इसलोक और परलोक के भोगों की प्राप्ति के लिए और भी बहुत से साधन है। इसलिए वह लौकिक फल की इच्छा से तीर्थयात्रा न करे अपितु आत्मिक शान्ति हेतु ही तीर्थयात्रा करे। ●

प्रिय-पाठक आपसे निवेदन है कि आपका सदस्यता शुल्क पूर्ण हो गया है और वर्तमान में कागज, छपाई, डाक आदि के दामों में वृद्धि होने के कारण पत्रिका का मासिक खर्च बढ़ गया है। अत: आपसे निवेदन है कि आप आजीवन पत्रिका (15 वर्ष) शुल्क ₹ 1000 /- कृपया शीघ्र जमा करावे, और हमें सूचित करें, जिससे पत्रिका सुचारूरूप से आपको मिलती रहे।

यह राशि आप निम्न प्रकार से हमें भेज सकते हैं -

1. बैंक द्वारा

NAME	:	SHRI ADINATH KUNDKUND KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST, ALIGARH
BANK NAME	:	PUNJAB NATIONAL BANK
BRANCH	:	RAILWAY ROAD, ALIGARH
A/C. NO.	:	1825000100065332
RTGS/NEFTS IFS CODE	:	PUNB0001000
PAN NO.	:	AABTA0995P

UPI
BHIM UPI Payments Accepted at
SHRI ADINATH KUND KUND KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST

Account Number : 1825000100065332, IFSC Code: PUNB0001000

2. Online : http://www.mangalayatan.com/online-donation/

3. ECS : Auto Debit Form के माध्यम से।

कवि परिचय

दौलतरामजी कासलीवाल

जयपुर राज्य के वसवा नगर के निवासी और साह आनन्दराम कासलीवाल के आप पुत्र थे। आप उच्चशिक्षित, विद्याव्यसनी, साहित्यकार के साथ ही नीतिपटु और राज्यकार्यकुशल थे। महाराज सवाई सिंह ने ई. 1720 के कुछ पूर्व ही उन्हें राज्यसेवा में नियुक्त कर लिया प्रतीत होता है और किसी राज्यकार्य से ही उन्हें आगरा भेजा था, जहाँ उन्हें आगरा के भूधरमल, हेमराज, ऋषभदास आदि जैन विद्वानों के सत्संग का लाभ मिला। वहीं उसी वर्ष पुण्यास्रव कथा कोष की रचना की थी। इसके पश्चात् वह कई वर्ष तक युवराज ईश्वरीसिंह के अभिभावक एवं खास दीवान तथा जयपुर के वकील के रूप में उनके साथ उदयपुर के राणा जगतसिंह के दरबार में रहे।

वहीं उन्होंने ई. 1738 में क्रियाकोष की रचना की थी। महाराज ईश्वरीसिंह के राज्यकाल में आप दीवान के रूप में जयपुर में ही अधिक समय रहे। उसी काल में उनके आदिपुराण, पदमपुराण, हरिवंशपुराण आदि विशाल ग्रन्थों की रचना हुई लगती है। ईश्वरीसिंह के अन्तिम वर्षों में और उसके पश्चात् माधौसिंह के राज्यकाल में कई वर्ष वह जयपुर राज्य के प्रतिनिधि (वकील) के रूप में उदयपुर दरबार में रहे, जहाँ सेठ बेलाजी की प्रेरणा से उन्होंने वसुनन्दि श्रावकाचार की भाषा टीका लिखी। जिसकी प्रथम प्रतियाँ सेठ कालुलाल और सेठ सुखजी की विदुषी पत्नियाँ मीठीबाई एवं राजबाई ने अपने हाथ से लिखी थी।

राजा पृथ्वीराज सिंह के समय 1770 ई. के लगभग उन्होंने राज्य सेवा से अवकाश ले लिया। इनकी अन्तिम रचना 1772 ई. की है, जिसके कुछ समय पश्चात् इनका स्वर्गवास हो गया लगता है। राजकीय कार्यों को सफलता के साथ संचालन के साथ उन्होंने धर्मज्ञ विद्वान के रूप में प्रतिष्ठा अर्जित की थी। आप राजपरिवार में आते जाते थे और पण्डित प्रवर कहलाते थे। इन सबके अतिरिक्त हिन्दी भाषा के विकास में पण्डितजी का अभूतपूर्व योगदान है। एक धर्मज्ञ विद्वान के रूप में पण्डित टोडरमलजी का आप बड़ा आदर करते थे।

हिन्दी भाषा भाषी क्षेत्र में आपके ग्रन्थों ने जैन चिन्तन को सम्हालने का महत्वपूर्ण कार्य किया।●

बाल वाटिका

प्रेरक प्रसंग

अहिंसा की विजय

प्रातः काल का समय था। ऊषा अपनी लालिमा बिछा रही थी। अन्धकार मिटता जा रहा था, प्रकाश फैल रहा था। उस समय एक गड़रिया भेड़ों के झुण्ड को लिए जा रहा था। झुण्ड में एक लँगड़ा मेमना बड़े कष्ट से चल रहा था। निर्दयी गड़रिया बार–बार डण्डे मारकर उसे चलाने की चेष्टा करता था। उसी ओर जानेवाले एक महापुरुष ने देखा तो अपनी सहज दयावश उसे गोद में उठा साथ में चलने लगे। महात्माजी! गड़रिया हँस कर बोला–थोड़ी देर में ही यह मौत के घाट उतर जायेगा। इसके लिए आपका यह कष्ट व्यर्थ है।

भाई! महात्माजी बोले– कोई किसी के लिए कष्ट नहीं उठाता। इसका कष्ट देखकर मेरे मन में जो वेदना हुई, उसे शान्त करने के लिए मैंने गोद में उठा लिया। यदि तेरी डण्डे से पीटने की इच्छा हो रही हो तो इसके स्थान पर तुम मुझे पीट सकते हो। महात्मा! आप ऐसा क्यों कहते हैं?–गड़रिया बोला । मैंने तो केवल इसीलिए कहा कि कुछ ही देर में ही यज्ञ की बलि–वेदी पर इसका सर धड़ से अलग हो जायेगा। तब आपकी दया इसके किस काम आयेगी? यह अकेला ही क्यों, इसके सभी साथी तलवार के घाट उतारे जायेंगे। महापुरुष ने कोई उत्तर नहीं दिया। वे चुपचाप झुण्ड के साथ चलने लगे। कुछ देर में यज्ञ के स्थान पर पहुँच कर–

राजन्! शान्त गम्भीर वाणी में करूणामूर्ति महापुरुष ने कहा–इन मूक पशुओं की हिंसा से आपको क्या मिलेगा? क्या शत्रुता है आपकी अबोध प्राणियों से, यज्ञ के पुनीत कार्यों में आप बाधा न बनें। राजा ने क्रुद्ध होकर कहा–बलिदान से देवता प्रसन्न होंगे। राज्य–वैभव और धन–धान्य की वृद्धि होगी।

महात्मा ने धरती पर पड़े एक बड़े तिनके को उठाकर दो टुकड़े करके कहा–आप इसे ज्यों का त्यों जोड़ सकते हैं? यह असम्भव है। राजा ने उत्तर देकर राज्य पुरोहित को आगे की कार्यवाही के लिए संकेत किया। पुरोहित के संकेत से मूक पशु को लेकर एक खड्गधारी वधिक बलि वेदी पर पहुँचता है कि तीव्र गति से महापुरुष भी वहाँ आ पहुँचे। पशु को पीछे हटाते हुए महात्मा ने गम्भीर गर्जन–सी वाणी में कहा–राजन्! तब आपका यह दुस्साहस ही है। जो टूटे को जोड़ नहीं सकता, बिगड़े को बना नहीं सकता, वह जीवित हो कैसे मार सकता है? क्या अधिकार है आपको इतने निरीह प्राणियों के वध करने का और यदि आप बलिदान करके ही अपनी शक्ति और वैभव वृद्धि में विश्वास रखते है। तो इसके स्थान पर मेरा बलिदान कीजिए। पशुबलि की अपेक्षा नरबलि से आपके हिंसाप्रिय देवता अधिक प्रसन्न होंगे।

सभा में सन्नाटा छा गया। महाराजा अजातशत्रु निरूत्तर हो गये। उन्होंने ध्यानपूर्वक निर्भीक महापुरुष के शान्त तेजस्वी मुखमण्डल को देखा। उसका मस्तक झुक गया उनके चरणों में।

महाराजा अजातशत्रु ने घोषणा की– ''आज से पशु हिंसा नहीं होगी।''

शिक्षा– हिंसा किसी भी रूप में हो, वह पाप ही है; क्योंकि क्रूर परिणामों के बिना हिंसा नहीं हो सकती, जबकि धर्म तो शान्त–अहिंसक वृत्तिपूर्वक ही होता है। अतः हिंसा में कभी भी धर्म नहीं हो सकता है।

''जिस प्रकार–उसी प्रकार'' में छिपा रहस्य

जिस प्रकार– मिट्टी से मिला जल है, व्यवहारनय उसको मैला देखता है, मैला बताता है क्योंकि व्यवहार संयोग से देखता है। परन्तु निश्चय, जल एवं मिट्टी दोनों अलग–अलग देखता है, अलग–अलग बताता है, निश्चय ही सत्यार्थ है। व्यवहार मात्र वर्तमान अवस्था को देखता है।

उसी प्रकार– व्यवहार आत्मा को कर्मों सहित देखकर आत्मा को अशुद्ध बताता है लेकिन निश्चय आत्मा और कर्म को अलग–अलग देखता है। अतः आत्मा को शुद्ध बताता है यही सत्यार्थ है।

जिस प्रकार– जगत में जहर और अमृत दोनों हो, तो दोनों को जानना। जहर को छोड़ने के लिए जानना जरूरी है तथा अमृत को ग्रहण करने के लिए जानना जरूरी है। एक मौत का कारण है दूसरा जीवन का ।

उसी प्रकार– जीव में रागादि परभाव भी है और वीतरागी स्वभाव भी हैं। दोनों को जाना जाता है। परभाव को छोड़ने के लिए तथा स्वभाव को ग्रहण करने के लिए जाना जाता है। एक दुख देनेवाला है दूसरा सुख देनेवाला है।

जिस प्रकार– जहाँ पानी का बहुत प्रवाह हो, वहाँ कोई खेती नहीं होती, बीज डालने से टिक नहीं सकता। स्थिर नहीं रह पाता है।

उसी प्रकार– सम्यग्दर्शन होने पर भी पुण्य का प्रवाह बहुत है, इसलिए स्थिरता का बीज वहाँ नहीं रह सकता। इसी कारण सर्वार्थसिद्धि के देव को स्थिरता नहीं होती, गुणस्थान नहीं बढ़ता।

जिस प्रकार– सैकड़ों हिरणों की टोली में सिंह आकर एक को पकड़े तो भी अन्य सभी हिरण कुछ नहीं कर पाते।

उसी प्रकार– सैकड़ों बंधुओं के बीच कोई रह रहा हो, मृत्यु आये, उसे ले जाये, सब देखते ही रह जाते है। कोई कुछ नहीं कर पाता।

जिस प्रकार– कोई ज्वरवाला प्राणी घी को खाकर या चिपड़कर अपने को स्वस्थ मानने लग जाय, ऐसा करने से वास्तव में वो मूर्ख ही है।

उसी प्रकार– कोई मनुष्य मुश्किल से पैदा किये गये तथा जिसकी रक्षा करना कठिन है और फिर भी नष्ट हो जानेवाला है, ऐसे धन आदि से अपने को सुखी मानने लग जाता है, वास्तव में वह मूर्ख ही है।

क्रमशः संकलन – प्रो० पुरुषोत्तमकुमार जैन, रुड़की

मार्च 2023 माह के मुख्य जैन तिथि-पर्व

6 मार्च – फाल्गुन शुक्ल 14
चतुर्दशी

7 मार्च – फाल्गुन शुक्ल 15
अष्टाह्निका महाव्रत समाप्त

11 मार्च – चैत्र कृष्ण 4
श्री पार्श्वनाथ ज्ञानकल्याणक

12 मार्च – चैत्र कृष्ण 5
श्री चन्द्रप्रभ गर्भ कल्याणक

15 मार्च – चैत्र कृष्ण 8
अष्टमी
श्री शीतलनाथ गर्भ कल्याणक

16 मार्च – चैत्र कृष्ण 9
श्री आदिनाथ जन्म-तप कल्याणक

20 मार्च – चैत्र कृष्ण 14
चतुर्दशी

21 मार्च – चैत्र कृष्ण 15
श्री अनंतनाथ ज्ञान-मोक्ष कल्याणक
श्री अरनाथ मोक्ष कल्याणक

22 मार्च – चैत्र शुक्ल 1
श्री मल्लिनाथ गर्भ कल्याणक

24 मार्च – चैत्र शुक्ल 3
श्री कुन्थुनाथ ज्ञान कल्याणक

26 मार्च – चैत्र शुक्ल 5
श्री अजितनाथ मोक्ष कल्याणक
दशलक्षण व्रत प्रारम्भ

27 मार्च – चैत्र शुक्ल 6
श्री संभवनाथ मोक्ष कल्याणक

29 मार्च – चैत्र शुक्ल 8
अष्टमी

षट्खण्डागम ग्रन्थ की वाचना अनवरत प्रवाहित
नौवीं पुस्तक की वाचना 7 फरवरी 2023 से प्रारम्भ

विद्वत् समागम – आदरणीय बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन, जयपुर एवं सहयोगी भाई-बहिनों तथा मङ्गलायतन परिवार का भी लाभ प्राप्त होता है।

दोपहर 01.30 से 03.15 तक (प्रतिदिन)	**षट्खण्डागम (धवलाजी)**
रात्रि 07.30 से 08.30 बजे तक	मूलाचार ग्रन्थ का स्वाध्याय
08.30 से 09.15 बजे तक	**समयसार ग्रन्थाधिराज के कलशों का व्याकरण के नियमानुसार शुद्ध उच्च्चारण सहित सामान्यार्थ**

नोट—इस कार्यक्रम में आप ZOOM ID-9121984198,
Password - mang4321
youtube channel - theerthdham mangalayatan
के माध्यम से भी शामिल हो सकते हैं।

समाचार-दर्शन

आदि-वीर मङ्गलोत्सव सानन्द सम्पन्न

तीर्थधाम मङ्गलायतन : श्री आदिनाथ कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ के तत्त्वावधान में तीर्थधाम मङ्गलायतन में गुरुवार, 2 फरवरी से सोमवार, 6 फरवरी 2023 तक आदि-वीर मङ्गलोत्सव प्रक्षाल, पूजन, विधान, सी.डी. स्वाध्याय, प्रवचन, गोष्ठी, सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि अनेक माङ्गलिक आयोजनों सहित सम्पन्न हुआ।

इस मङ्गल पुनीत आयोजन में देश के सैकड़ों साधर्मियों, मङ्गलार्थी छात्रों सहित आत्मार्थी कन्या विद्यानिकेतन दिल्ली, शाश्वत्धाम उदयपुर आदि की बालिकाओं सहित जैनदर्शन के आध्यात्मिक व सैद्धान्तिक विषयों पर आयोजित पंच परमागम और पंच कल्याणक की मुख्यता से समस्त कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

दैनिक कार्यक्रमों में प्रात: 6.00 से 6.45 तक प्रौढ़ कक्षा पण्डित सचिन जैन द्वारा, 7.00 से 9.15 तक प्रक्षाल-पूजन-विधान; 9.45 से 10.15 तक पूज्य गुरुदेवश्री का सी.डी. प्रवचन; 10.15 से 11.00 तथा 11.00 से 11.45 तक पंच परमागमों पर विद्वानों द्वारा स्वाध्याय; दोपहर 1.30 से 2.30 तक बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन द्वारा वाचना; 2.30 से 3.30 तक पंच परमागमों पर विचार संगोष्ठी का आयोजन; सायंकाल 5.40 से 6.15 तक पण्डित जे.पी. दोशी द्वारा कक्षा; 6.15 से 7.00 जिनेन्द्रभक्ति; 7.05 से 8.00 तथा 8.00 से 9.00 तक पंच परमागमों पर विद्वानों द्वारा स्वाध्याय का लाभ दिया गया। प्रतिदिन रात्रि 9.00 से 9.45 तक अनेक ज्ञानवर्धक सांस्कृतिक कार्यक्रमों का भी आयोजन किया गया।

उद्घाटन समारोह — दिनांक गुरुवार, 2 फरवरी 2023 को प्रात: आदि-वीर मङ्गलोत्सव में आयोजित शोभायात्रा से कार्यक्रम का प्रारम्भ हुआ। ध्वजारोहण - श्री सुनीलकुमार अभयकुमारजी अमन इटारसी परिवार, शिविर का उद्घाटन - श्री संदीपजी शाह अहमदाबाद के करकमलों से किया गया। इस अवसर पर मंच पर विद्वानों की श्रृंखला में पण्डित रजनीभाई दोशी, हिम्मतनगर; पण्डित जे.पी. दोशी, मुम्बई; डॉ. राकेशजी जैन, नागपुर; पण्डित देवेन्द्रकुमारजी जैन, बिजौलियां; डॉ. दीपकजी जैन, जयपुर; डॉ. विवेकजी जैन, छिन्दवाड़ा; पण्डित ऋषभजी जैन, छिन्दवाड़ा; डॉ. स्वर्णलता जैन नागपुर; डॉ. ममता जैन उदयपुर; श्री पी.के. जैन रुड़की, श्री विजयभाई हाथरस-मुम्बई, श्री जैनबहादुर जैन, कानपुर, श्री मनोजजी, श्री भरतभाई भौंरे, कारंजा आदि उपस्थित रहे। अतिथियों का स्वागत श्री स्वप्निल जैन, श्री अनिल जैन मङ्गलायतन ने किया।

विधान - इस अवसर पर पंच परमागम विधानों की शृंखला में प्रथम दिन समयसार विधान का आयोजन किया गया। जिसके विधानकर्ता-श्री विजय जैन परिवार हाथरस-मुम्बई द्वारा महावीर मन्दिर में; द्वितीय दिन अष्टपाहुड़ विधान, विधानकर्ता-मनोजकुमार धन्यकुमारजी परिवार कारंजा; तृतीय दिन नियमसार विधान, विधानकर्ता-श्रीमती उषा दोशी पण्डित जे.पी.दोशी परिवार, मुम्बई; चतुर्थ दिन प्रवचनसार विधान, विधानकर्ता-श्री जैनबहादुर जैन ऋषभ जैन परिवार कानपुर; व अन्तिम दिन मङ्गलार्थी अनिल प्रेमचन्द जैन परिवार, पथरिया द्वारा सम्पन्न हुए। सम्पूर्ण विधि-विधान डॉ. विवेक जैन, छिन्दवाड़ा, पण्डित ऋषभ शास्त्री, छिन्दवाड़ा; पण्डित संजय जैन, कोटा, मङ्गलार्थी समकित जैन शास्त्री आदि के सहयोग से सम्पन्न कराये गये।

स्वाध्याय : पण्डित रजनीभाई दोशी, हिम्मतनगर; पण्डित देवेन्द्रजी जैन, बिजौलियां; पण्डित जे.पी. दोशी, मुम्बई; डॉ. राकेशजी जैन, नागपुर; डॉ. योगेशचन्द्र जैन, अलीगंज; पण्डित ऋषभ शास्त्री, उस्मानपुर; डॉ. दीपक जैन, जयपुर; डॉ. विवेक जैन, छिन्दवाड़ा; पण्डित विक्रान्त शास्त्री, झालरापाटन; पण्डित आलोक शास्त्री, कारंजा; मङ्गलार्थी अनुभव जैन, करेली आदि विद्वानों द्वारा स्वाध्याय का मंगल सान्निध्य प्राप्त हुआ।

गोष्ठी : प्रथम दिन **समयसार गोष्ठी** में विषय प्रस्तुतिकरण पण्डित रजनीभाई दोशी, हिम्मतनगर; डॉ. ममता जैन, उदयपुर; पण्डित विवेक शास्त्री, दिल्ली; पण्डित शुभम जैन, भोपाल; पण्डित नीतेश शास्त्री, कोटा; मङ्गलार्थी प्रतीक जैन, सेमारी; मङ्गलार्थी अंकित जैन आरोन। विषय विशेषज्ञ—डॉ. राकेश जैन, नागपुर। अध्यक्ष—श्री विजयभाई हाथरस-मुम्बई। संचालन—पण्डित जे.पी.दोशी मुम्बई द्वारा किया गया। मङ्गलाचरण—बाल मङ्गलार्थी दिव्य जैन।

द्वितीय दिन **अष्टपाहुड़ गोष्ठी** में विषय प्रस्तुतिकरण डॉ. राकेश जैन, नागपुर; पण्डित विक्रान्त पाटनी, झालरापाटन; पण्डित ऋषभ शास्त्री, उस्मानपुर; डॉ. जयन्तीलाल जैन, मङ्गलायतन विश्वविद्यालय; पण्डित ऋषभ शास्त्री, दिल्ली; मङ्गलार्थी शान्तनु जैन; संचालन—पण्डित संयम शास्त्री, नागपुर; विशेषज्ञ विद्वान—पण्डित देवेन्द्रजी जैन, बिजौलियां; अध्यक्ष—श्री राहुल जैन, सनावद। मङ्गलाचरण—मङ्गलार्थी अर्चित जैन ने किया।

तृतीय दिन **नियमसार गोष्ठी** में विषय प्रस्तुतिकरण श्रीमती उषा दोशी, मुम्बई; डॉ. स्वर्णलता जैन, नागपुर; विदुषी राजकुमारीजी दिल्ली; पण्डित जे.पी. दोशी,

मुम्बई; डॉ. दीपक जैन, जयपुर; मङ्गलार्थी संयम जैन, नागपुर। विषय विशेषज्ञ—डॉ. राकेश जैन, नागपुर। संचालन—पण्डित ऋषभ शास्त्री, भोपाल। अध्यक्ष—श्री मिलिन्दजी हिंगोली। मङ्गलाचरण—मङ्गलार्थी प्रशम जैन, गोधा।

चतुर्थ दिन **प्रवचनसार गोष्ठी** में विषय प्रस्तुतिकरण पण्डित संतोषजी कटनी; डॉ. योगेशचन्द जैन, अलीगंज; मङ्गलार्थी सिद्धान्त करेली; मङ्गलार्थी अर्चित जैन, ललितपुर; डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन द्वारा किया गया। विषय विशेषज्ञ—पण्डित जे.पी. दोशी, मुम्बई। अध्यक्ष—श्री नरेन्द्रजी बड़जात्या, जयपुर। संचालन—मङ्गलार्थी केविन जैन, मुम्बई। मङ्गलाचरण—मङ्गलार्थी दर्श जैन, ललितपुर।

इस प्रकार चारों ही दिन अनेकानेक मार्मिक विषयों पर ऊहापोहपूर्वक गम्भीर चिन्तन प्रस्तुत किया गया।

सांस्कृतिक कार्यक्रम : प्रथम दिन राजसभा का आयोजन पण्डित विवेक शास्त्री, ऋषभ शास्त्री छिन्दवाड़ा द्वारा किया गया। द्वितीय दिन ऐतिहासिक नाटिका **इतिहासों की स्वर्णभूमि** मङ्गलार्थी छात्रों द्वारा प्रस्तुत की गयी। जिसका संचालन मङ्गलार्थी समकित शास्त्री और श्रीमती अनुभूति लुहाड़िया द्वारा किया गया। बाल मङ्गलार्थियों द्वारा पूज्य गुरुदेवश्री की पाठशाला का सराहनीय कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया। तृतीय दिन अनन्तमति बालिका मण्डल द्वारा **वज्रबाहु का वैराग्य** नाटिका प्रस्तुत की गयी। चतुर्थ दिन पण्डित संजय शास्त्री, कोटा द्वारा **हस्तिनापुर और चिदायतन** से सम्बन्धित लघु कथा का आयोजन किया गया।

अन्तिम दिन मोक्षकल्याणक के दिन भगवान आदिनाथ कैलाशपर्वत पर प्रक्षाल पूजन का आयोजन किया गया।

विशेष - तीर्थधाम चिदायतन, हस्तिनापुर में आयोजित आगामी पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महामहोत्सव का अग्रिम आमन्त्रण पण्डित रजनीभाई दोशी, पण्डित अशोक लुहाड़िया, पण्डित देवेन्द्र जैन बिजौलियां, डॉ. राकेश जैन नागपुर, श्री स्वप्निल जैन अलीगढ़, श्रीमती बीना जैन, देहरादून; मङ्गलार्थी निखिल जैन, श्री अम्बुज जैन, मेरठ आदि एवं अनेकानेक विद्वानों की उपस्थिति में मंच से **1 दिसम्बर से 6 दिसम्बर 2024 तक श्री 1008 शान्तिनाथ जिनबिम्ब पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महामहोत्सव** का आयोजन आप सभी की गरिमामयी उपस्थिति में सम्पन्न होगा। जिसके सौधर्म इन्द्र-शचि इन्द्राणी बनने का सौभाग्य श्री स्वप्निल जैन-श्रीमती प्रिया जैन; कुबेर बनने का सौभाग्य श्री आकाश जैन-श्रीमती नीलांशा जैन, ग्वालियर ने प्राप्त किया। एतदर्थ उन्हें हृदय से बधाई।

इसी अवसर पर श्री आदिनाथ कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट अलीगढ़ की मीटिंग श्री बाहुबली मन्दिर में आयोजित की गयी। जिसमें अध्यक्ष श्री अजितप्रसाद जैन दिल्ली, मुख्य अतिथि श्री नरेन्द्र बड़जात्या जयपुर, श्री केशवदेव जैन कानपुर, श्री रविन्द्र जैन मुम्बई, श्री महीपाल ज्ञायक, श्री आदीश जैन दिल्ली, श्री जैनबहादुर जैन कानपुर, श्री नवनीत जैन मेरठ आदि अनेकानेक महानुभाव उपस्थित थे।

समापन : अन्तिम दिवस 6 फरवरी को निदेशक पण्डित सुधीर शास्त्री ने सभी विद्वानों, आगन्तुक महानुभावों, विशिष्ट अतिथियों एवं सभी मङ्गलार्थियों के सहयोग हेतु आभार व्यक्त करते हुए कार्यक्रम समापन की घोषणा की।

इस प्रकार यह आदि-वीर मङ्गलोत्सव अनेकानेक उपलब्धियों सहित सानन्द सम्पन्न हुआ।

ढाई द्वीप इन्दौर में ऐतिहासिक पंचकल्याणक सम्पन्न

इन्दौर : देशभर में ज्ञान प्रचार के क्षेत्र में अग्रणी संस्थान पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट जयपुर के निर्देशन में श्री कुन्दकुन्द दिगम्बर जैन शासन प्रभावना ट्रस्ट द्वारा ढाई द्वीप जिनालय इन्दौर में सदी का सबसे बड़ा ऐतिहासिक भव्य पंचकल्याणक का आयोजन 20 से 26 जनवरी 2023 तक सम्पन्न हुआ। इस पंचकल्याणक में 1168 दिगम्बर जिनबिम्बों की प्राण प्रतिष्ठा बाल ब्रह्मचारी अभिनन्दनकुमार शास्त्री, खनियांधाना के प्रतिष्ठाचार्यत्व में प्रतिष्ठित हुई।

आदिनाथ दिगम्बर जैन पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव अनेक विशेषताओं के साथ सम्पन्न हुआ। प्रथम दिन 20 जनवरी को गर्भ कल्याणक की पूर्व क्रिया सम्पन्न हुई। जिसमें 16 स्वप्नों के मनोरम दृश्य दिखाये गये। 21 जनवरी को गर्भ कल्याणक का महामहोत्सव मनाया गया। 22 जनवरी को भगवान के जन्म कल्याणक पर 1008 कलशों के माध्यम से सुमेरु पर्वत के शिखर पर बाल तीर्थंकर का जन्माभिषेक सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर प्रदेश के मुख्यमन्त्री श्री शिवराजसिंह चौहान पधारे। 23 जनवरी को दीक्षा कल्याणक के अवसर पर दान तीर्थ के प्रवर्तन स्वरूप आहारदान की विधि राजा श्रेयांस व राजा सोम (श्री संजय दीवान, सूरत एवं श्री राहुल गंगवाल, जयपुर) द्वारा सम्पन्न हुई। 24 व 25 जनवरी को भगवान के ज्ञान कल्याणक महोत्सव पर समवसरण की रचना हुई, जिसमें दिव्यध्वनि का मनोरम दृश्य दिखाया गया। 26 जनवरी को पंचकल्याणक के अन्तिम दिन, जिसे भव्यरूप प्रदान किया गया। इस माध्यम से ढाई द्वीप में 1168 प्रतिमाओं की प्राण प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई, जिसका प्रत्यक्ष गवाह बनने का अवसर मुमुक्षुओं को मिला। पंच कल्याणक के सौधर्म इन्द्र श्री कमल-ऊषा पाडलिया, इन्दौर; कुबेर इन्द्र - श्री मुकेश-बबीता जैन, ग्वालियर।

भगवान के माता-पिता श्री आनन्दकुमार-श्रीमती चन्द्रकान्ता पाटनी, इन्दौर। यज्ञनायक श्री प्रदीपकुमार-श्रीमती कुसुम चौधरी, किशनगढ़।

स्मरणीय है कि डेढ़ एकड़ में फैला यह संकुल जिसमें 24 हजार स्क्वायर फीट का विशाल जिनालय, 18 हजार स्क्वायर फीट का विशाल स्वाध्याय भवन, ऑडीटोरियम, चित्रालय, पुस्तकालय, 56 कमरों का सुसज्जित गेस्ट हाउस, 24 वन बीएचके फ्लैट, 24 कमरों का विद्वत् निवास, 4500 स्क्वायर फीट की विशाल भोजनशाला तथा 20 कमरों का स्टाफ क्वार्टर निर्मित है। जिनालय में सीमन्धरस्वामी की 33 इंज की स्फटिक मणि की भव्य प्रतिमा विराजमान हुई। यह संरचना धार्मिक दृष्टि से तो अद्वितीय है ही पर्यटन की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है।

सम्पूर्ण कार्यक्रम मुमुक्षुओं के हृदयहार डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल, जयपुर; पण्डित अभयकुमार जैन, देवलाली; पण्डित राजेन्द्रकुमारजी, जबलपुर; पण्डित शैलेशभाई तलोद; डॉ. मनीष जैन, मेरठ; पण्डित संजय जैन, कोटा आदि अनेकानेक विद्वानों का मङ्गल सान्निध्य प्राप्त हुआ। इसी अवसर पर जन्मकल्याण में करीब तीस हजार लोगों की उपस्थिति में डॉ. भारिल्ल के गरिमामय सान्निध्य में श्री स्वप्निल जैन, पण्डित अशोक लुहाड़िया एवं श्री अम्बुज जैन, मेरठ एवं अनेकानेक विद्वानों व मङ्गलार्थियों की उपस्थिति में हस्तिनापुर में निर्मित तीर्थधाम चिदायतन का श्री 1008 शान्तिनाथ जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महामहोत्सव का आयोजन दिनांक 01 दिसम्बर से 06 दिसम्बर 2024 तक किया जायेगा। इसकी मङ्गल घोषणा एवं श्री स्वप्निल जैन द्वारा साधर्मी भाई-बहिनों को मङ्गल आमन्त्रण का आह्वान भी किया गया।

वैराग्य समाचार

अलीगढ़ : श्री विनोद जैन का आकस्मिक देह परिवर्तन हो गया है। आपका जीवन सरल स्वभावी धार्मिक भावनाओं से ओतप्रोत था। आप पवनजी के अभिन्न मित्र थे। तीर्थधाम मङ्गलायतन से विशेष प्रेम था।

इटावा : श्री हुकमचन्द जैन का आकस्मिक देह परिवर्तन हो गया है। आपका जीवन सरल स्वभावी धार्मिक भावनाओं से ओतप्रोत था। आपका तीर्थधाम मङ्गलायतन से विशेष प्रेम था।

जबेरा : श्रीमती अंजना मलैया का आकस्मिक देह परिवर्तन हो गया है। आप शान्तस्वभावी धार्मिक महिला थीं। पण्डित कमलजी की धर्मपत्नी एवं पण्डित धीरज शास्त्री की माताश्री थीं।

दिवंगत आत्माएँ शीघ्र ही मोक्षमार्ग प्रशस्त कर अभ्युदय को प्राप्त हो—ऐसी भावना मङ्गलायतन परिवार व्यक्त करता है।

श्रीमान सद्धर्मानुरागी बन्धुवर,

सादर जयजिनेन्द्र एवं शुद्धात्म सत्कार!

आशा है आराधना-प्रभावनापूर्वक आप सकुशल होंगे।

वीतरागी जिनशासन के गौरवमयी परम्परा के सूत्रधार पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के प्रभावनायोग में निर्मित आपका अपना **तीर्थधाम मङ्गलायतन** बीस वर्षों से, सुचारुरूप से, अपने लक्ष्य की ओर निरन्तर गतिमान है।

वर्तमान काल की स्थिति को देखते हुए, अब **मङ्गलायतन** का जीर्णोद्धार एवं अनेक प्रभावना के कार्य, जैसे-भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन, भोजनशाला, **मङ्गलायतन** पत्रिका प्रकाशन आदि कार्यों को सुचारू रूप से भी व्यवस्था एवं गति प्रदान करना है। यह कार्य आपके सहयोग के बिना, सम्भव नहीं हैं। इसके लिए हमने एक योजना बनायी है, जिसमें आपको एक छोटी राशि प्रतिमाह दानस्वरूप प्रदान करनी होगी। इस योजना का नाम - **'मङ्गल वात्सल्य-निधि'** रखा गया है। हम आपको इस महत्त्वपूर्ण योजना में सम्मानित सदस्य के रूप में शामिल करना चाहते है। **'मङ्गल वात्सल्य-निधि'** में आपको प्रतिमाह, मात्र एक हजार रुपये दानस्वरूप देने हैं।

मङ्गलायतन का प्रतिमाह का खर्च, लगभग चौदह लाख रुपये है। इस योजना के माध्यम से आप हमें प्रतिमाह 1,000 (प्रतिवर्ष 1000X12=12,000) रुपये दानस्वरूप देंगे। भारत सरकार ने **मङ्गलायतन** को किसी भी रूप में दी जानेवाली प्रत्येक दानराशि पर, आयकर अधिनियम की धारा 80जी के अन्तर्गत छूट प्रदान की है। आप इस महान कार्य में सहभागिता देकर, स्व-पर का उपकार करें।

आप इसमें स्वयं एवं अपने परिवारीजन, इष्टमित्र आदि को भी सदस्य बनने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। साथ ही **तीर्थधाम मङ्गलायतन** द्वारा संचालित होनेवाले कार्यक्रमों में, आपकी सहभागिता, हमें प्राप्त होगी।

आप यथाशीघ्र पधारकर यहाँ विराजित जिनबिम्बों के दर्शन एवं यहाँ वीतरागमयी वातावरण का लाभ लेवें - ऐसी हमारी भावना है।

हार्दिक धन्यवाद एवं जयजिनेन्द्र सहित

अजितप्रसाद जैन	**स्वप्निल जैन**	**सुधीर शास्त्री**
अध्यक्ष	महामन्त्री	निदेशक

सम्पर्क-सूत्र : 9756633800 (सुधीर शास्त्री)
email - info@mangalayatan.com

मङ्गल वात्सल्य-निधि

सदस्यता फार्म

नाम .....

पता .....

..... पिन कोड .....

मोबाइल ..... ई-मेल .....

मैं **'मङ्गल वात्सल्य-निधि'** योजना की सदस्यता स्वीकार करता हूँ और मैं ..... राशि जमा करवाऊँगा / दूँगा।

हस्ताक्षर

''चौथाई ग्रास दान भी अनुकरणीय''

ग्रासस्तदर्धमपि देयमथार्धमेव,
तस्यापि सन्ततमणुव्रतिना यथर्द्धिः।
इच्छानुसाररूपमिह कस्य कदात्र लोके,
द्रव्यं भविष्यति सदुत्तमदानहेतुः॥

अर्थात् गृहस्थियों को अपने धन के अनुसार एक ग्रास अथवा आधा ग्रास अथवा चौथाई ग्रास अवश्य ही दान देना चाहिए। तात्पर्य यह है कि हमें ऐसा नहीं समझना चाहिए कि जब मैं लखपति या करोड़पति हो जाऊँगा, तब दान दूँगा; बल्कि जितना धन हमारे पास है, उसी के अनुसार थोड़ा-बहुत दान अवश्य देना चाहिए। – आचार्य पद्मनन्दि : पद्मनन्दि पञ्चविंशतिका, श्लोक 230

यह राशि आप निम्न प्रकार से हमें भेज सकते हैं –

1. बैंक द्वारा

NAME	:	SHRI ADINATH KUNDKUND KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST, ALIGARH
BANK NAME	:	PUNJAB NATIONAL BANK
BRANCH	:	RAILWAY ROAD, ALIGARH
A/C. NO.	:	1825000100065332
RTGS/NEFTS IFS CODE	:	PUNB0001000
PAN NO.	:	AABTA0995P

2. Online : http://www.mangalayatan.com/online-donation/

3. ECS : Auto Debit Form के माध्यम से।

UPI
BHIM UPI Payments Accepted at
SHRI ADINATH KUND KUND KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST

तीर्थधाम मङ्गलायतन के
बीसवें वार्षिकोत्सव की झलकियाँ

Regn. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23

स्वर्णिम अवसर—

भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन में प्रवेश हेतु

तीर्थधाम मङ्गलायतन द्वारा संचालित भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन के आगामी सत्र में अंग्रेजी माध्यम से कक्षा सातवीं पास कर चुके ऐसे कक्षा आठवीं तथा ग्यारहवीं के लिए भी सुनहरा अवसर है जो भी छात्र यहाँ के सुरम्य वातावरण में उच्चस्तरीय लौकिक शिक्षा के साथ-साथ धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा का भी लाभ प्राप्त करना चाहते हैं, वे हमारे कार्यालय अथवा वेबसाइट से प्रवेश आवेदन-पत्र मंगाकर अपेक्षित जानकारियों एवं प्रपत्रों के साथ भरकर भेज देवें।

विदित हो कि कम से कम 60 प्रतिशत या उससे अधिक अंक प्राप्त विद्यार्थी ही आवेदन योग्य हैं, स्थान सीमित हैं। फार्म जमा करने की अन्तिम तिथि 28 फरवरी 2023 है। अतः शीघ्र ही पूर्ण जानकारी सहित आवेदन-पत्र भेजने का अनुरोध है।

तीर्थधाम मङ्गलायतन (प्रवेश फार्म, भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन)
C/o विमलांचल, हरिनगर, गोपालपुरी, अलीगढ़ (उ.प्र.) 202001
सम्पर्क सूत्र-9756633800 (पण्डित सुधीर शास्त्री); 7581060200 (प्राचार्य);
8279559830 (उपप्राचार्य)
info@mangalayatan.com; www.mangalayatan.com

प्रवेश शिविर दिनांक रविवार, 26 मार्च से शुक्रवार, 31 मार्च 2023 तक आयोजित होगा।

पं. सं. : DELBIL/2001/4685
स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक स्वप्निल जैन द्वारा **मङ्गलायतन** मुद्रणालय, आगरा रोड, अलीगढ़-202001 छपवाकर, 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़-202001 से प्रकाशित। **सम्पादक :** डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन।

If undelivered please return to -

मङ्गलायतन
श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, हरिनगर, आगरारोड, अलीगढ़-202001 (उ.प्र.)
Shri Adinath-Kundkund-Kahan Digamber Jain Trust
Harinagar, Agra Road, Aligarh-202001 (U.P.)
Ph. : 9997996346, 2410010/10; Fax : 2410019/22
info@mangalayatan.com www.mangalayatan.com